'अनामिका की कविताओं में स्त्री-विमर्श'

सुनीता बिष्ट*

सारांश

विमर्शों के इस दौर में आज स्त्री–विमर्श सर्वाधिक चर्चित विषय है। हिंदी सहित्य में लगभग पिछले दो–तीन दशक से स्त्री–विमर्श पर चर्चाएं हो रही हैं। सभी नारीवादी साहित्यकारों ने स्त्री–विमर्श को अपने–अपने ढ़ंग से परिभाषित किया है। स्त्री–विमर्श के हर पहलू को समझने की कोशिश की उसी के परिमाण स्वरूप स्त्री–विमर्श का यह रूप आज हमारे सामने है।

वैसे तो स्त्री–विमर्श स्वाधीनता की प्राप्ति के बाद की संकल्पना है, किन्तु बीसवीं शदी के अन्तिम दो दशकों में इस विचार धारा को पनपने के लिए उपयुक्त परिवेश मिला। स्त्री–विमर्श आत्मचेतना, आत्मसम्मान, आत्मगौरव के साथ समता और समानाधिकार की पहल का ही दूसरा नाम है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य स्त्री को उसके अस्तित्व के प्रति सजग करना उसे 'मैं' की चिंता का अहसास कराना, स्त्री को मानवीय बनाना, पुरूष के समान उसे भी इंसान समझना, उसके दुःख दर्द के कारणों से समाज को अवगत कराना और उनको दूर करने का प्रयास करना है।

मुख्य शब्द– स्त्री, विमर्श मैं, अस्तित्व, नूरजहाँ, फुर्सत, बंसी बजैया, खुदा, घूँघट, इम्प्रॉपर फ्रैक्शन, बेपर्दगी,

आधार सामग्री– विषय की प्रकृति द्वितीय स्त्रोतों पर आधारित है। स्त्री–विमर्श के विश्लेषण हेतु प्रकाशित, अप्रकाशित पाठ्य सामग्री को उपयोग में लाया गया है।

प्रस्तावना

स्त्री–विमर्श की प्रबल व्याख्याता, बेहतरीन कवयित्री, उपन्यासकार और आलोचक अनामिका का जन्म 17 अगस्त 1961, मुजफ्फरपुर (बिहार) में हुआ। स्त्री–विमर्श पर अब तक इनकी आठ आलोचनात्मक पुस्तकें और 11 कविता संग्रहों का प्रकाशन हो चुका है। किन्तु इनका सम्पूर्ण कथा साहित्य स्त्री–विमर्श पर ही आधारित है।

कविता के विविध पक्ष :– अनामिका की कविता में स्त्री–विमर्श के विविध पक्ष हमको देखने को मिलते हैं। जिनमें–वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री, पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री, सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री, परम्परागत और आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में स्त्री आदि हैं।

वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य में अनामिका स्त्री के द्वारा मैं की चिन्ता, एवं अस्तित्व बोध के प्रश्नों को उठाती है। स्त्री के वैयक्ति अनुभवों जैसे–रजो धर्मा, गर्भधारण करने की अनुभूति, मातृत्व का सुख, स्त्री प्रश्न, स्त्रियों की समस्याएं, स्त्री जीवन का एकाकी पन, उसकी विवशता को अनामिका मार्मिक ढ़ंग से अपनी कविताओं के द्वारा वाणी प्रदान करती हैं।

परिवार भारतीय समाज की सबसे सुदृढ़ ईकाई है। परिवार और उसमें निहित सम्बन्धों को अनामिका संवेदनशीलता चिन्तनशीलता के साथ विश्लेषित करती है। उनकी कविताओं में पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री के विविध रूपों के दर्शन होते हैं जिनमें दाम्पत्य सम्बन्धों में स्त्री, घरेलू हिंसा, पुरूष की असंवेदनशीलता, सामंजस्य स्थापित करती स्त्री, विवाह के प्रति सशंकित स्त्री, समर्पित स्त्री, दोहरी भूमिका का निर्वाहन करती स्त्री, वात्सल्य की प्रतिमूर्ति स्त्री आदि स्त्री के रूप हमें देखने को मिलते हैं।

सामाजिक परिप्रक्ष्य में हमें सार्वभौमिक भगिनीवाद, शोषित स्त्री, अस्तित्व के प्रति सजग स्त्री, समाजीकृत स्त्री, उपेक्षित स्त्री, सेक्स वर्कर्स के रूप में स्त्री आदि के द्वारा अनामिका स्त्री की दशा का साक्षात्कार कराती है।

परम्परागत और आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में हमें स्त्री का परम्परागत रूप, रूढ़ियों की जकड़न, मानसिक गुलामी देखने को मिलती है। बाजारवाद के प्रभाव से स्त्री को मात्र वस्तु समझा जाना, स्त्री का मात्र देह के रूप में उपयोग करना, उपभोक्तावादी संस्कृति आदि जैसे दृष्टिकोणों के बारे में पता चलता है। आज स्त्रियां अपनी पारम्परिक रूप से स्थापित छवि का खंडन कर रही हैं। वह न अपनी पूजा चाहती हैं न निंदा, वह तो पुरूष के समान इंसान बनना चाहती है।

* शोधछात्रा, डी0एस0 बी0 परिसर, नैनीताल।,

अनामिका स्त्री–विमर्श की प्रबल व्याख्याता, बेहतरीन कवियत्री उपन्यासकार और आलोचक के रूप में सामने आती हैं। इनके लेखन में गजब की धार है, क्योंकि अनामिका ने जो देखा, सहा, भोगा उसे अपनी कलम से बहुत ही सलीके से समेटा। उनका स्त्री–विमर्श पर बेबाक और गहन अध्ययन चिन्तन स्त्री–विमर्श को नयी दिशा प्रदान करता है। अनामिका की कलम और सोच ने स्त्रियों को एक अलग मुकाम दिया। हर वर्ग, वर्ण, जाति नस्ल की स्त्री की स्थिति की वह निष्पक्ष जाँच–पड़ताल करती हैं। स्त्री होने के नाते उनमें स्त्रियों के प्रति संवेदनात्मक लगाव दिखाई देता है। औरत और उससे जुड़े मुद्दे उनके हमेशा करीब रहे इसलिए वे स्त्रियों से जुड़े मुद्दों को जमीनी हकीकत के साथ पाठकों के समक्ष रखती हैं।

स्त्री–विमर्श की पहली शर्त है– 'मैं' की चिन्ता का अहसास और अनामिका की कविताएँ, अपने 'मैं' के प्रति प्रश्न उठाती हैं। अपनी कविताओं में अनामिका स्त्री की जिंदगी को उसके जीवन, उसके मातृत्व उसके पारिवारिक दायित्वों, उसकी संवेदनशीलता, उसकी मौत और उसके प्यार की सहायता से दिखाती हैं। उनकी कविताओं के माध्यम से ही हमें यह समझने में मदद मिलती है कि आधुनिक भारत की महिलाएं किन–किन समस्याओं को लेकर चिंतित और परेशान हैं। अनामिका की कविताओं में स्त्रियों को एक साथ कमजोर व मजबूत दिखाया गया है। उदाहरण के लिए 'मैं एक दरवाजा थी' नामक एक कविता में स्त्री का व्यक्तित्व बहुत मजबूत दिखायी देता है, जिसमें नायिका सब अपमान सहने के बावजूद अपने सपने को पूरा करती है और आगे भी वह नए–नए सपने देखती है।

वहीं 'अभ्यागत' नामक कविता में अनामिका स्त्री के कमजोर व्यक्तित्व को दिखती हैं। इसमें नायिका के लिए हर एक दिन 'निष्कासन' है। युवा आलोचक क्सेनिया लेसिक कहते हैं – ''हिन्दी की कवयित्री अनामिका अपनी रचनाओं में स्त्री के व्यक्तित्व का महत्व किन्हीं महान उपलब्धियों को प्राप्त करने में नहीं बल्कि एक मां के तौर पर आत्मत्यागी बलिदान के रूप में स्वीकारती हैं। यह बात भी दिलचस्प है कि अनामिका की कविताएं बेहद बौद्धिक लगती हैं। उनकी कविताएं दार्शनिक कविताएं हैं। उनकी कविताओं में औरत एक छोटी लड़की की उम्र से लेकर बूढ़े होने तक अपने 'मैं' या अपने 'स्व' की तलाश करती रहती है। और वे इन कविताओं में औरतों की दुनिया को समझने व उनकी मानसिकता को बुनने और उनके अंतरिक्ष को रचने की कोशिश करती हैं ।''[1]

भारतीय स्त्री के सन्दर्भ में यह बात कही जाती है कि वह अपने भावों, विचारों, आकांक्षाओं, तर्कों से नहीं सोचती। वह तो पुरूष समाज में परवरिश होने के कारण हर क्षेत्र में पुरूषों से ही पहल करने की अपेक्षा रखती है। अपने अस्तित्व का बोध स्त्री–विमर्श की पहली शर्त है। अनामिका की 'उड़ान' कविता में अस्तित्व अस्मिताबोध का सुन्दर उदाहरण देखने को मिलता है–

''किसकी नूरजहाँ हूँ मैं ?
इस अँधियारे कमरे में 'यों
टीन खुरचती आटे की ?''[2]

महिलाओं को अक्सर 'हाउस वाहफ' और 'बेडपार्टनर' के रूप में ही आँका जाता है। ऐसा करके समाज और सभ्यता के निर्माण में उसकी भागीदारी को नकारा जाता है और उसे उपेक्षित किया जाता है। स्त्री की यही उपेक्षा जीवन में क्षोभ और खालीपन लाती है। वह अक्सर अकेली सोचती है–''क्या मेरी अपनी भी कोई धड़कन है ?'' 'प्रत्यभिज्ञा' कविता में अनामिका यही प्रश्न उठाती है–

''क्या खुद मैं अपनी पड़ोसिन हूँ ?
क्या मैंने खुद से की है नमस्ते ?
क्या मेरे दो हाथ जुड़े हैं कभी
अपने भीतर के उस 'मैं' की खातिर ?''[3]

अनामिका की कविताओं में हमें स्त्री का परित्यक्ता रूप भी देखने को मिलता है। 'तुलसी का झोला' नामक कविता में अनामिका तुलसीदास को कठघरे में खड़ा करती हैं।

''सदियों तक मैंने किया इन्तजार –
आयेगा कोई तोडेगा टाँके गूदड़ के
ले जाएगा मुझको आके ।
पर तुमने तो पा लिया था अब राम रतन
इस रतना की याद आती क्यों ?''[4]

इस कविता के माध्यम से परित्यक्ता पत्नी रतना अपने पति को याद दिलाना चाहती है कि वह रात भी धन धमंड वाली ही थी जब तुम मिलने के लिए आये थे और सदा के लिए मुझे छोड़कर चले गये। रतना कहती है– तुमने सीता के मन की गहराई को पा लिया, पर यह नहीं समझ पाये कि एक स्त्री के लिए मायका घर नहीं होता। आगे रतना कहती है–

''तुमने उस इत्ती–सी फुर्सत पर
बोल दिया धावा
तो मेरे हे राम बोला, बम भोला–
मैंने तुम्हें डाँटा
डाँटा तो सुन लेते
जैसे सुना करती थी मैं तुम्हारी..... ।''[5]

इन पंक्तियों में तुलसीदास पर उठाये गये प्रश्न निराधार या महज आवेगजनित नही हैं। उनका ठोस भावनात्मक और सामाजिक आधार है। यह विडम्बना ही है कि महाकवि तुलसीदास की प्राणप्रिया रही रत्नावली का पक्ष एक स्त्री कवि को सैकड़ों साल बाद रखना पड़ा। सैकड़ों साल बाद भी अनेक रत्नाओं के दुःख नहीं बदले हैं। सामाजिक संरचना में थोड़ा अन्तर है, किन्तु परिवर्तन की गति बहुत धीमी है। अब प्रश्न वही पुराने हैं कि क्या सचमुच पुरूष स्त्री को नहीं समझते या जानबूझकर समझना ही नहीं चाहते ? इस कविता के द्वारा अनामिका रत्नावली के रूप में परित्यक्ता स्त्री के दुख को उपालम्भ, शिकायतों के द्वारा प्रस्तुत करती हैं। अन्त में वह अपने को स्वः निर्णय की आभा से दीप्त करती हैं। यही स्वः निर्णय लेना स्त्री–विमर्श का एक प्रमुख घटक माना जाता है। पति के द्वारा छोड़कर चले जाना, किसी भी स्त्री के जीवन का अन्त नहीं है। उसके आगे भी जीवन है। यही अनामिका दिखाना चाहती हैं–

''मैं भी समेट रही हूँ खुद को
अपने झोले में ही !
अब निकलूँगी मैं भी
अपने सन्धान में अकेली !
आपको झोला हो आपको मुबारक! ''[6]

स्त्री का अकेले ही अपने लक्ष्य की ओर बढ़ जाना उसके स्त्री–मुक्ति की ओर बढ़ते कदमों की आहट है।

अनामिका शब्दों का अपने ढ़ंग से प्रयोग करके उसमें नया अर्थ भरती हैं। यही गुण उन्हें विशिष्टता प्रदान करता है। उनकी कविताओं में हमें प्रश्नातुर स्त्री के रूप का दर्शन सर्वत्र हो जाता है–

''क्या रखा है चाँद में ?
अम्मा, ये उसके भी सिर पर
मुस्काता बैठा है जो दाग–
क्या उसके दूल्हे ने
मार–मार कर माथा फोड़ा होगा उसका
किसी शाम ?
क्या चाँद औरत है, अम्मा ?
कौन उसकी खातिर
बंसी बजाता है ?
बंसी बजैया भी उतने ही निष्ठुर
क्यों होते हैं
जितने माथाफोरैया ?''[7]

उपरोक्त पंक्तियों के चुभते प्रश्न बेचैन करते हैं, जिनको टालकर आगे जाने का मन नहीं करता ।

आर्थिक रूप से निर्भर होने के लिए आज की स्त्री नौकरी कर रही है। नौकरी करने के साथ–साथ ही वह परिवारिक जिम्मेदारी का निर्वाह भी पूरी ईमानदारी के साथ कर रही है। स्त्री के दोहरी भूमिका के निर्वाहन का सजीव चित्रण अनामिका इस प्रकार करती हैं–

समयः सुबह साढ़े सात, एफ. एम. टाइम
स्थानः सीढ़ी के नीचे आलने घेरकर बनाया गया पूजा–घर !
दृश्यः कुर्सी पर दफ्तर की साड़ी। देह पर एक भीगा कुरता,
हाथ में दुर्गासप्तशती।
'या देवी सर्वभूतेषु'..... सविता, देखो बेटी, जल तो
नहीं रही सब्जी ?
'निद्रारूपेण संस्थिता'... जागा पिंटू, उसे जगाओ, स्कूल–बस छूटेगी।
'नमस्तस्यै नमस्तस्यै' ....फोन बज रहा है, उठाओ तो !
मेरा होगा तो कह देना–सी.एल. पर हूँ आज !
सिर दुख रहा है !
'ऊँ जयन्ती काली–महाकाली'– अखबारवाले भैया, रूक लो!
आती हूँ, कर लूँ हिसाब, कल मिल गयी मुझे तनख्वाह।[8]

यहाँ पर यह कहना गलत न होगा कि लगभग हर नौकरी पेशा औरत की यही स्थिति है और अनामिका ने इसका मार्मिक चित्रण कर हर स्त्री की व्यथा को वाणी दी है। बेटे, प्रिय और माँ, से 'सबसे' ज्यादा तुम हो प्यारे' कहनी वाली स्त्री को सिर्फ खुदा की अदालत में ही न्याय मिलता है–

''.....अब हुई उसकी गिरफ्तारी ।
पेशी हुई खुदा के सामने
कि इसी एक जुबां से उसने
तीन–तीन लोगों से कैसे यह कहा–
सबसे ज्यादा तुम हो प्यारे।'
यह सरासर धोखा –
सबसे ज्यादा माने सबसे ज्यादा।
लेकिन खुदा ने कलम रख दी और कहा–
औरत है, उसने यह गलत नहीं कहा।''[9]

स्त्री–विमर्श का ऐसा सुन्दर प्रस्तुतीकरण केवल अनामिका की कविताओं में ही मिलता है। स्त्री लेखन की प्रमुख चिन्ताओं में से एक है– विवाह सम्बन्ध और उसमें निहित अनाचार। इस परिप्रेक्ष्य में कविता के क्षेत्र में स्त्रियों ने अधिक बेवाकी और आत्मीयता से अपने विचार व्यक्त किये हैं। अनामिका की कविताएं इस हिंसा का अत्यन्त सजीव और मार्मिक चित्र पाठक के समक्ष प्रस्तुत करती हैं–

''पीठ नीली
चेहरा पीला
लाल आँखें और
जख्म हरे–
कुदरत के सब रंगों की बोतल
उलट–पलट जाती है मुझ पर
उनके आते ही !''[10]

आज की नारी विवाह प्रथा से सशंकित है। उसने विवाह प्रथा को एक सन्देहास्पद स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है, उसमें प्रश्न चिन्ह लगा दिए हैं–

'' क्या प्रेम में पड़ना खटाई में पड़ना है, अम्मा ?
जो मुझसे प्रेम करेगा –
क्या मुझको ले देगा वह उड़नखटोला
या बहला–फुसलाकर
ये मेरे बचे–खुचे पंख भी
खचाक् नोच लेगा ?''[11]

अनामिका अपनी कविताओं द्वारा समाज में स्थापित पुरूष वर्ग की उस विकृत मानसिकता का परिचय कराती हैं जो आज भी यही मानता है कि स्त्री की सफलता उसकी योग्यता के दम पर नहीं बल्कि उसकी देह और सुन्दरता की देन होती है।

अनामिका 'भिन्न' कविता में औरत की बौद्धिकता पर उठने वाले प्रश्नों की पड़ताल करते हुए कहती हैं कि –

''अगर कहीं गलती से
मेरा माथा
मेरे अधोभाग से भारी पड़ जाता है–
लोगों के गले यह नहीं उतरता
मेरे माथे पर बट्टा लग जाता है–
इम्प्रॉपर फ्रैक्शन ' का ।''[12]

मर्दानगी के दम्भ का मारा पुरूष आज भी यही सोचता है कि स्त्रियाँ सौन्दर्य के बल पर ऊँचे पदों पर पहुँचती हैं न कि बुद्धि के बल पर। पुरूष का मानना है औरत देह की राजनीति करती है।

जबकि वास्तविकता यह है कि हमारा समाज औरतों की बेपर्दगी से डरता है। क्योंकि सामाजिक दृष्टिकोण आज भी स्त्री के प्रति मलिन है। अनामिका इसी बात पर चोट करती है अपनी 'चादर' कविता के द्वारा –

''मेरी माँ
अक्सर ही सोते में
मुझको उढ़ा देती है चादर !
डर लगता है उसको मेरी
बेपर्दगी से । ''[13]

महिलाओं पर होने वाले हर आक्रमण के लिए समाज महिलाओं को ही दोषी ठहराता है। वह कभी स्त्री के शरीर को तो कभी उसके वस्त्रों को उस पर होने वाले अत्याचार का कारण मानता है। पर सच तो यह है कि आज 1 साल की बच्ची से लेकर 85 साल की वृद्धा भी सुरक्षित नहीं है। पुरूष के लिए स्त्री मात्र देह है, भोग्या है। नैतिक मूल्य पुरूष के सन्दर्भ में कोई अर्थ नहीं रखते, वह जब चाहे किसी से भी सन्दर्भ जोड़ सकता है। स्त्री पर अपना एकाधिकार स्थापित कर सकता है। स्त्री मात्र स्त्री होने के कारण ही दयनीय स्थिति में है। वह असुरक्षित है इसी असुरक्षा के भाव को अनामिका की कविता 'हँसी' में देखते हैं–

''जब तेल में अपनी परछाई देखकर
बाल–विधवा रूपसी तेलिन बोली–
तो ..... बाल पकने को आये
चलो जिन्दगी कट गयी
इज्जत से आखिर।
और बात पूरी होने के पहले ही
धड़–धड़–धड़क–धम–धम आ पहुँचे
राजा के घुड़सवार
उसे उठा कर ले गये
जंगल के उस पर ।'' [14]

वही, बाजारवाद के फलस्वरूप आज स्त्रियां लगातार मुस्कुराते रहने को अभिशप्त हैं। इसलिए अनामिका हँसी को नये जमाने का घूँघट कहती है। बाजारवाद में भावनाओं, संवेदनाओं, सम्बन्धों की कोई जरूरत नहीं होती। वहां तो हर चीज बस बेचे और खरीदे जाने के लिए है। इस बाजारवाद को अनामिका अपनी कविता द्वारा इस प्रकार व्यक्त करती है–

''एक दिन आऊँगी मैं टी0वी0 पर
एक अँगूठे की तरह दिखाऊँगी देह–
दूर से !
काया जब छाया की माया बन जायगी,
ललकारूँगी शोहदों को तब–
'आ बैल, मुझे मार' हिम्मत है तो आ जा ।''[15]

निष्कर्ष:—इस प्रकार अनामिका की काव्यकृतियों में स्त्री के विविध रूपों के दर्शन होते हैं— परित्यक्ता स्त्री, प्रश्नातुर स्त्री, मौन को तोड़ती स्त्री, दिग्भ्रमित स्त्री, अस्मिताबोध के प्रति सजग स्त्री, सहभागिता के रूप में स्त्री, विद्रोहिणी रूप में स्त्री, सामंजस्य स्थापित करती स्त्री, दोहरी भूमिका का निर्वाहन करती स्त्री आदि। अनामिका की कविताओं में स्त्री विमर्श प्रमुखता से देखने को मिलता है। अनामिका भारतीय परिवेश में पारिवारिक और सामाजिक स्थितियों में फंसी नारी की दशा का मार्मिक उद्घाटन करती है।

अनामिका इतिहास, पौराणिक गाथाओं से लेकर आधुनिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री की स्थिति की निष्पक्ष जाँच—पड़ताल करती है। इनकी कुछ कविताएं इतनी गम्भीर हैं जो पाठक को भाव विभोर कर सोचने पर मजबूर कर देती हैं। उनमें प्रमुख है— 'चौदह बरस की दो सेक्स—वर्कर्स, वृद्धाएँ धरती का नमक हैं, भीख मांगते बच्चे का वर्णन' आदि।

इस प्रकार हम देखते हैं —अनामिका की कविताओं में आक्रोश के स्वर कम हैं और इनकी स्त्रियाँ आग्रह भरे स्वर में स्वयं को समझने की माँग करती हैं।

''सुनो हमें अनहद की तरह
और समझो जैसे समझी जाती है
नई—नई सीखी हुई भाषा!''[16]

संदर्भ सूची

1. पुस्तक—वार्ता, 53 अंक, जुलाई—अगस्त 2014, महात्मा अंतराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, (महाराष्ट्र) पृ0—41
2. अनामिका, दूब—धान, पृ0—37 भारतीय ज्ञानदीपपीठ प्रकाशन, प्र0स0 2008
3. वही, पृ0—102
4. वही, पृ0—17
5. वही, पृ0—8
6. वही, पृ0—21
7. वही, पृ0—25
8. अनामिका, दूब—धान, पृ0—50 भारतीय ज्ञानदीपपीठ प्रकाशन, प्र0स0 2008
9. अनामिका, अनुष्टुप, पृ0—53 किताब घर प्रकाशन, दिल्ली 1998
10. अनामिका, खुरदुरी हथेलियाँ, पृ0—46, राधा कृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2005
11. अनामिका, दूब—धान, पृ0—48 भारतीय ज्ञानदीपपीठ प्रकाशन, प्र0स0 2008
12. अनामिका, अनुष्टुप, पृ0—51 किताब घर प्रकाशन, दिल्ली 1998
13. अनामिका, खुरदुरी हथेलियाँ, पृ0—39, राधा कृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, 2005
14. वही, पृ0—103
15. अनामिका, दूब—धान,पृ0—70
16. अनामिका, खुरदुरी हथेलियाँ, पृ0—14